National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(61): 55-60
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

डॉ. पूनम कुमारी
पूर्व सहायक संस्कृत प्रवक्ता,
दयानन्द महाविद्यालय, हिसार।

Correspondence:
डॉ. पूनम कुमारी
पूर्व सहायक संस्कृत प्रवक्ता,
दयानन्द महाविद्यालय, हिसार।

उभरते भारत का साहित्य : राष्ट्रबोध

डॉ. पूनम कुमारी

सारांशः-

उभरते भारत का साहित्य- अर्थात् वर्तमान समय के विकसित भारत का साहित्य।

राष्ट्रबोध- राष्ट्र के प्रति चेतना वर्तमानसाहित्य हमें किस प्रकार की आन्तरिक चेतना की अनुभूति करवाता है।

साहित्य- "सहितस्य भावः साहित्यः"

सहित शब्द के दो अर्थ है- साथ होना और हित के साथ होना। अतः साहित्य वही है जिससे मानव का हितसम्पादन हो। व्यापक अर्थ में साहित्य सम्पूर्ण वाङ्मय का पर्याय है। संकुचित अर्थ में काव्य-नाटक आदि के लिए प्रयोग किया जाता है।

साहित्य ही समाज का दर्पण होता है। हर रचनाकार अपनी रचना में समाज के किसी न किसी पक्ष का अवलोकन कर रहा होता है उसका पर्यवेक्षण कर हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है जो राष्ट्रबोध का परिचायक है।

परन्तु आज के समय का चिन्तनीय विषय है हमारी संस्कृति। किसी भी राष्ट्र का बोध उसकी संस्कृति ही करवाती है। राष्ट्रबोध की परिचायिका है- संस्कृति।

अनेक प्राकृतिक तत्त्वों का समन्वयपरक स्वरूप है संस्कृति जो हमें निरन्तर प्रवाहशील रखती है। हमारी संस्कृति संघर्ष व चेतना की संस्कृति रही है। हमारे आन्तरिक विचार एवं संस्कार ही बाहरी संस्कृति के निर्माण का आधार है।

मन, वाणी व कर्म से सत्य का अनुसरण करते हुए राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर कल्याणकारी कार्यों की ओर अग्रसर रहें व अपने आस-पास अच्छे परिवेश का निर्माण करें ये हर व्यक्ति की व्यक्तिगत जिम्मेवारी है।

परन्तु आज के बाहरी परिवेश को देखते हुए बड़ी आन्तरिक पीड़ा होती है कि अपने संस्कारों को संस्कृति को भूलकर पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करता हुआ ये राष्ट्र किस ओर बढ़ रहा है। चारित्रिक व नैतिकमूल्यों का पतन सर्वत्र दिखाई देता है। विश्वगुरु कहलाने वाले भारतदेश की संस्कृति को बचाना होगा और संस्कृति को बचाना है तो देवभाषा संस्कृत को बढ़ाना होगा। कहा भी गया है-

"भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे- संस्कृतं संस्कृतिस्तथा।"

आदिभाषा देवभाषा ही हमारे पुरातन ज्ञान की अववाहिका है। सम्पूर्ण ज्ञानस्रोत का आधार है। धर्मपूर्वक जीवनयापन करने का सन्देश देती है। मनुस्मृतिः में धर्म के दशलक्षण बताये गये हैं।

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।"[1]

इस सब मूल्यों का अपने जीवन में आचरण करता हुआ मानव ही देवत्वरूप को प्राप्त कर सकता है।

भारतीय संस्कृति का परिचय पाने के लिए संस्कृत साहित्य का अनुशीलन करना अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय साहित्य का सम्पूर्ण प्रेरणा का स्रोत ऋग्वेद है।

लौकिक साहित्य में आदि काव्य रामायण सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रेरणा स्रोत है। साहित्य समाज को पुष्ट करता है। हमारा साहित्य राष्ट्रीय व सामाजिक चेतना को प्रदर्शित करता है जो उभरते भारत की समृद्ध संस्कृति को दर्शाता है।

प्रमुखशब्दा- साहित्य, धर्म, संस्कृति, मानवीयमूल्य, राष्ट्रबोध।

भूमिका-

आज के उभरते भारत के अर्थात् समृद्धभारत के साहित्य पर दृष्टिपात करने से पूर्व थोड़ा वैदिक साहित्य (आदि एवं अलौकिक साहित्य) के विषय में किञ्चित जान लेते है।

हमारा प्राचीनतमं साहित्य वैदिकसाहित्य जो वेदों से प्रारम्भ होता है। ऋग्वेद के मन्त्र जो सम्पूर्णराष्ट्र को एकसूत्र में बांधने की कामना करते हैं यथा-

"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।"[2]

अर्थात्- सभी के दिल या संकल्प अविरोधी हो, मन प्रेम से भरे हो जिससे सुख-सम्पदा में वृद्धि हो।

हमारे लौकिकसाहित्य में आदि कवि वाल्मीकि द्वारा रचित आदिकाव्यरामायण सम्पूर्ण साहित्यनिधि का उज्ज्वल रत्न है। रामायण के पात्र सम्पूर्ण विश्व के लिए अनुकरणीय है। रामायण की धर्मभूमि ही विश्वधर्म का आधार है।

"किमस्ति एतादृशः, आदर्शपुत्रः, आदर्शभ्राता, आदर्शपतिः, आदर्शलोकरञ्जकः, आदर्शलोकनायकः, आदर्शप्रजापालकश्च यादृशः रामः?"[3]

संस्कृत साहित्य में सभी विषय समाहित है-

ज्योतिष, इतिहास, विज्ञान, वैद्यकं, स्थापत्यकला, वास्तुकला इत्यादि।

धर्म तो भारतीयसाहित्य का प्राणतत्त्व है धर्म ही मानवता का मार्गदर्शक है। धर्म है क्या तो महाभारत में महर्षि वेदव्यास ने धर्म की व्याख्या इस प्रकार की है-

"धारणाद् धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।
यः स्याद् धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः।।"[4]

संस्कृति-

संस्कृति किसी भी देश का दर्पण होती है वही साहित्य में प्रतिफलित होती है। हमारा भारतदेश सांस्कृतिक व धार्मिक दृष्टि से विश्व का पथप्रदर्शक है। हम भारतीय ही सर्वप्रथम विश्व के चरित्रनिर्माता है ऐसा मनु ने कहा है-

"एतद् देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।"[5]

वर्तमान समय में भी अनेक साहित्य साधक है जिनकी अनवरत साहित्यसाधना से भारत समाज परिपुष्ट है। साहित्यकार अपनी रचना में समाज व राष्ट्र के किसी न किसी पहलू को उठाता है। वर्तमान परिस्थितियों को समाज में घट रही विसङ्गतियों को आधार बनाकर ही साहित्यकार अपने साहित्य की रचना करता है ताकि उन सब विचारों व तथ्यों को समाज के समक्ष लाया जा सके यही कारण है कि साहित्य समाज का दर्पण है।

साहित्य किसी भी देश के सर्वांगीण विकास का मेरुदण्ड होता है। समाज के समस्त मूल्यों को आत्मसात करके युगान्तर तक उन्हें प्रसारित करता है। आज भौतिकोन्नति उच्चतम शिखर पर है पर नैतिकमूल्यों का निरन्तर ह्रास हो रहा है। सर्वत्र मत्स्यन्याय ही दृष्टिगोचर हो रहा है। अर्थात् - शक्तिशाली व्यक्ति अपने से निर्बल को ग्रस लेना चाहता है। व्यक्ति की धार्मिक आस्था, विचारों की पवित्रता और निश्चलप्रेम की भावना मानों विलुप्त होती जा रही है।

अपने साहित्य से समाज की सेवा करने वाली पण्डिताक्षमाराव का साहित्य राष्ट्रबोध की भावना से परिपूर्ण है। उनके द्वारा रचित 'कथामुक्तावली' नारीजीवन की विभिन्न समस्याओं की संवाहिका है। 'कथामुक्तावली' का प्रत्येक पात्र आधुनिक समाज का प्रतिनिधित्व करता है। उनके स्त्रीपात्रों में सौन्दर्य और तप का मणिकाञ्चन संयोग समाया है। एक तरफ वे नारी की अस्मिता को रेखाङ्कित करती है वहीं दूसरी तरफ अमर्यादित आचरण उनके लिए त्याज्य है। समाज में फैले आडम्बरों का विरोध करती है, निश्छल प्रेम को सर्वोपरि मानती है। उनकी कथाएं नारी सशक्तिकरण को आधार प्रदान करती है। संस्कृत साहित्यकारों की रचनाएं "विश्वं भवत्येकनीडम्" की अनुभूति करवाती है। सम्पूर्ण विश्व की चेतना उनके साहित्य में समाई है।

उभरताभारत अर्थात् समृद्धभारत-

संस्कृत साहित्य के प्रख्यात कवि डॉ. अभिराजराजेन्द्रमिश्र ने संस्कृतसाहित्य के समृद्धिकाल को सन् 1950 से स्वीकार किया है जो अब तक प्रवाहमान है।

किसी भी देश की सभ्यता व संस्कृति की पहचान साहित्य से ही होती है। इस दृष्टि से संस्कृत साहित्य अग्रगण्य है। सांस्कृतिक-चेतना, धार्मिक भावना, कलात्मकता तथा वैज्ञानिकता इसमें समाई है।

नवीनता व विलक्षणता के प्रति आकर्षण मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है। उभरते भारत का संस्कृतसाहित्य भी नयीविधाओं, नयेछन्दों, नये प्रतिमानों के प्रति आकर्षित होता जा रहा है।

अभिप्राय यह है कि अद्यतन विचारों, भावनाओं एवं उनसे ओत-प्रोत सामाजिक तथ्यों को सुरक्षित रखने की दृष्टि से आज भी संस्कृतसाहित्य में सृजन का कार्य अनवरत चल रहा है। आधुनिक कवि, लेखक, नाटककार भारतीय संस्कृति के प्रति अपने-अपने ढंग से निष्ठा व सम्मान प्रदर्शित करते हैं जो राष्ट्रबोध का परिचायक है। इक्किसवीं शताब्दी के साहित्य का अन्वेषण करें तो संस्कृतसाहित्य के

मूर्धन्य कवि प्रो. मिथिलाप्रसादत्रिपाठी जी के गीतिकाव्यों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उनके काव्य राष्ट्रबोध की भावना से परिपूर्ण है। इनके काव्यों में राष्ट्रीयस्वंयसेवकसंघ के संस्थापक 'पं. केशवराम बलिरामहेडगेवार' के संघर्षपूर्ण जीवन से लेकर वर्तमान परिवेश की संस्कारलघिमा की अनुभूतियां इनके काव्यों में समाई है। कवि का 'राष्ट्रशतकम्' जैसा कि नाम से ही विदित है राष्ट्र के प्रति भक्तिभावना से परिपूर्ण है कवि कामना करते हैं कि वेदशास्त्र व पुराणों में कहे गये उपदेशों को भारतीयसंस्कृति के सभी लोग जाने और राष्ट्रभक्त बनें इतना ही नहीं अपने काव्य "केशवशतकम्" में प्रथमसंघसंस्थापक "पं.केशवराम बलिराम-हेडगेवार" जी के जीवनचरित का वर्णन करते हैं इनका जन्म 1 अप्रैल 1889 को नागपुर में हुआ। पिता बलिराम व माता का साया इनके सिर से उठ गया जब ये मात्र 12 वर्ष के थे। अपने संघर्षपूर्ण जीवन को जीतेहुए केशवराम जी ने महसूस किया कि जबतक जनता प्रयास नहीं करेगी तब तक स्वतन्त्रता प्राप्ति सम्भव नहीं। "संघे शक्तिः कलौयुगे" इस उक्ति का समग्र अभ्यास डॉ. केशवराम महोदय जी ने किया। 1925 ई. में विजयदशमी के पावनपर्व के अवसर पर नागपुर में राष्ट्रीयस्वंयसेवकसंघ की स्थापना की वर्ष 1940 में उनकी आत्मा परमतत्व में विलीन हो गई।

अपने "माधवीयम्" गीतिकाव्य में द्वितीयसंघसञ्चालक परम-पूज्यमाधवसदाशिवगोलवलकरजी का, तृतीयसंचालकमधुकरबाला-साहेब, चतुर्थसंचालक-भौतिकशास्त्र के प्राध्यापक 'राजेन्द्रसिंह' जी का एवं पञ्चम संचालक-दर्शनशास्त्र के विद्वान् श्रीसुदर्शन जी का अपने काव्य में वर्णन करते हैं।

उनकी राष्ट्रबोध से परिपूर्ण रचनाएं हमें राष्ट्रबोध करवाती है कि आज के इस स्वतन्त्र भारत में सांस लेने का संघर्ष कितना महान था उनकी महानविचारधारा हमें अपने जीवन में उच्च आदर्शों की ओर प्रेरित करती है। मिथिलाप्रसादत्रिपाठी जी आधुनिक समाज की परिवर्तित परिस्थितियों को आचार-विचारों को देखकर चिन्ताग्रस्त है, संस्कारों का ह्रास सर्वत्र दिखाई देता है जिसे वे अपनी भावमाला में पद्य के माध्यम से स्पष्ट करते हैं-

सत्प्रणामः पदस्पर्शरीतिस्तथा
चाटुता निम्नता हीनता कथ्यते
तारवाण्या हलो-हाय-टाटा-प्रिया,
सभ्यतायां वरिष्ठा मता भारते।।"[6]

अर्थात्- भारतवर्ष में आज के समय में सम्यक् प्रणाम अर्थात् चरणस्पर्श अभिवादन करने को हेयश्रेणी में गिना जाता है, इसके विपरीत यदि उच्चस्वर में हेलो, हाय कहना श्रेयस्कर समझा जाता है।

रमाकान्त शुक्ल जी की ओजस्वी रचनाएं आज भी कविंमंचों का प्राणतत्त्व बनी हुई है। यथा-

"मानवामानितं दानवाबाधितं
निर्जराराधितं सज्जनासाधितम्
पण्डितैः पूजितं पक्षिभिः कूजितं
भूतलेः भाति मेऽनारतं भारतम्।।"[7]

अर्थात्- मनुष्यों के द्वारा अत्यन्त सम्मानित दानवों के द्वारा अबाधित, देवताओं के द्वारा आराधित, सज्जनों के द्वारा आसाधित पण्डितों के द्वारा पूजित तथा पक्षियों के कूजन में अभिव्यक्त मेरा भारत भूतल पर अनवरत सुशोभित हो रहा है।

"अर्थकामान्वितं धर्ममोक्षान्वितं
भक्तिभावान्वितं ज्ञानकर्मान्वितम्
नैकमार्गैः प्रभुं चैकमाराधयद्
भूतले भाति मेऽनारतं भारतम्।"[8]

अर्थात्- अर्थ और काम से युक्त धर्म और मोक्ष से युक्त, भक्तिभाव से युक्त, ज्ञान और कर्म से युक्त तथा अनेक मार्गो से एक प्रभु की आराधना करता हुआ मेरा भारत भूतल पर सदा सुशोभित रहता है। अपने भारतदेश की विशिष्टताओं को इंगित करते हुए कवि अपने भारत देश का गौरवबोध करवा रहे हैं।

प्रो.राधावल्लभत्रिपाठी जी की जनतालहरी और रोटिकालहरी आज के शोषित समाज का यथार्थ प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है।

प्रो.भागीरथीनन्द महोदय जी का 'श्रीगुरुभक्तिकुसुमाञ्जलिशतकं' गुरुशिष्यपरम्परा का आदर्श स्थापित करता है।

कवि अभिराजराजेन्द्रमिश्र जी राष्ट्र में समानता का भाव देखना चाहते हैं किन्तु संसार में भेदभाव व पक्षपात विद्यमान है बन्धु आज बन्धु होकर भी बन्धु नहीं है। कवि अभिराज लिखते हैं-

"केयं शिक्षा को धर्मः कीदृशमिदं नु बन्धुत्वम्।
सत्स्वपि येषु जनाः कल्पन्ते यूयं यूयं वयं वयम्।।"[9]

अर्थात्- यह कैसी, शिक्षा है क्या धर्म है और कैसा बन्धुत्व है जिसके होते हुए भी लोग सोचते है आप आप है और हम हम है।

कवि अपने राष्ट्र में असहाय, दीन, मजदूरों के संघर्षपूर्ण जीवन को देखता है। सर्वजनहिताय व सर्वजनसुखाय की कामना से राष्ट्र के हर उस धनीव्यक्ति को निर्धनव्यक्ति की सहायतार्थ प्रेरित करने का प्रयास करता है अपनी पंक्तियों के माध्यम से-

"परितोऽपि वामराणां तृणशालिका इमाः।
होलानलं समिन्धय बन्धो! शनैः शनैः।।"[10]

अर्थात्- हे धनिकवर्ग तुम्हारे घर के चारों और गरीबों की झुग्गी झोपड़ियां है होलिकादहन का उत्सव सम्भल कर मनाओं। कवि समाज के ढोगीं और पापाचारी पण्डितों पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं। खाने में प्याज व लहसून का परहेज करने वालों तुम नित्यजीवन में पाप व दुराचार का परहेज क्यों नहीं करते?

"पलाण्डुनैंव नो लशुनं द्विजानां भोजने ग्राह्यम्,
किमेतैर्यदि भवेत्पापं दुराचरणञ्च तद्भक्ष्यम्।।"[11]

समाज का कोई भी पहलू कविराज से अनछुआ नहीं है समाज की हर विसङ्गतियों पर कवि की पैनी नजर है।

राष्ट्रीयता की गूंज इनके साहित्य में विद्यमान है राष्ट्र के गौरवभूत-तत्त्वों को आत्मसात करके कवि की वाणी देशप्रेम का निदर्शन करती है। आज समाज में अपराधिक प्रवृत्तियां निरन्तर बढ़ती जा रही है अपराध को रोकने में निष्फल पुलिसवर्ग पर व्यङ्ग्य करते हुए कवि लिखते हैं-

"मिथो मद्यं पिबन्त्यधिसायमेते रक्षिणश्चौराः,

अमीषां तेऽपराधास्तर्हि कस्मै खलु निवेद्येरन्।।"[12]

अर्थात् ये चोर और सिपाही हर शाम एक साथ बैठकर शराब पीते हैं तो फिर उन सैंधमारों के अपराध किससे निवेदित किए जाएं। इस प्रकार कवि ने राष्ट्र की विभिन्न समस्याओं को अपनी लेखनी का विषय बनाया हैं और आज के मनुष्य को राष्ट्र की समस्याओं का बोध् करवाया है।

प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी

आधुनिक संस्कृतजगत के अमूल्यरत्न एवं सहृदय कवि प्रो. राधावल्लभात्रिपाठी जी विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी एवं ओजस्वी वक्ता है। बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न प्रो. त्रिपाठी जी संस्कृत के प्रख्यात नाटककार, निबंधकार, उपन्यासकार, अनुवादक, समीक्षक एवं आलोचक है। इनकी विभिन्न साहित्यिककृतियां समाज की विभिन्न समस्याओं को प्रस्तुत करती है। कुछ रचनाओं का संक्षिप्त वर्णन अपने शोधपत्र में प्रस्तुत कर रही हूँ।

'गीतधीवरम्' त्रिपाठी जी को ताललयाश्रित रागकाव्य है। जिसमें कवि का गम्भीर एवं दार्शनिक चिन्तन समाया है। गीतधीवरम् का नायक धीवर संसार रूपी सागर को कुशलतापूर्वक पार करने वाला व्यक्ति है जिसकी अन्तश्चेतना जागृत हो गई है। त्रिपाठी जी लिखते है-

"नौकामिह सारं सारम्,

गन्तास्मि कदाचित्पारम् ।

उत्तीर्णः स्वामपि मन्ये पारावारमपारम् ॥"[13]

अर्थात्- इस संसार रूपी समुद्र में विपतियों की लहरे उठती रहती है पर एक कुशलधीवर की भांति अपने धैर्य और विवेक की पतवार के सहारे इस संसार रुपी सागर को पार किया जा सकता है। कवि अपनी रचना के माध्यम से मनुष्य को दृढ़संकल्पी एवं आत्मविश्वासी बनने के लिए प्रेरित करता है। विवेक और धैर्य के बल पर अपने लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। गीतधीवरम् मानवीयसंवेदनाओं एवं मानवीय मूल्यों का सहजतापूर्वक बोध कराने में सक्षम है।

प्रेक्षणक सप्तकम्

प्रो. राधावल्लभत्रिपाठी जी द्वारा रचित एकांकी संग्रह है जिसमें विभिन्न सामाजिक समस्याओं को आधार बनाया गया है। प्रथम एकांकि सोमप्रभम् दहेज प्रताडित नारी के नारी की दुःखद घटना को व्यक्त करती है। जिसका पति शहर से बाहर नौकरी करता है वह अपनी पांच साल की बेटी के साथ सास-ससुर के पास रहती है। खुद नौकरी करती है परन्तु उसकी मासिक आय पर उसका कोई अधिकार नहीं । अपनी बेटी को स्कूल का नया बैग दिलवाने में भी असमर्थ है। दहेज की प्रताडना के साथ-साथ पुत्र न होने का अभिशाप भी भुक्त रही है। बेटी व पति की अनुपस्थिति में सास-ससुर विभिन्न कारणों के बहाने पीटते है इतना ही नहीं जलाकर मार डालने का षड्यन्त्र रचते है।

संयोगवंश बेटी स्कूल से लौट आती है छिपकर सब देखती है और अपनी समझदारी का परिचय देती हुई पुलिस को बुला लाती है। इस प्रकार वह अपनी मां के सन्तप्त जीवन में चन्द्रमा का शीतलप्रकाश पुञ्ज साबित होती है। सोमप्रभम् एकांकी को सार्थकता प्रदान करती है। आज के समृद्ध भारत में भी कहीं पुत्र की अभिलाषा रखने वाला परिवार स्त्री की दुर्दशा कर देता है, कहीं दहेज की प्रताड़ना है तो कहीं प्रेमप्रवञ्चना से ढगी नारी का अभिशप्त जीवन यत्र-तत्र देखने को मिल ही जाता है। इस प्रकार ये एकांकी संग्रह समाज की समस्याओं का यथोचित चित्रण करता है ओर हमें बोध करवाता है कि आज भी हमारे राष्ट्र में नारी की स्थिति सुखद नहीं है। अन्तिम एकांकी 'प्रतीक्षा' में युवा पुत्री के माता- पिता अपनी बेटी के समय पर घर न पहुंचने के कारण चिन्तित है। उनका मन अनेक प्रकार की अनिष्ट आशंकाओं से भर जाता है। हर बेटी का माता- पिता इसी परिस्थिति से गुजरता है। क्या बेटी होना इतना असुरक्षित और अभिशप्त है ?

यहां चिन्ता का विषय यह नहीं है कि वो बेटी है या फिर उसके मां-बाप को उस पर विश्वास नहीं है बल्कि चिन्ता का विषय तो समाज के गिरते मूल्य व चारित्रिक पतन को लेकर है। इस प्रकार समाज की वर्तमान परिस्थितियों को मौलिक चिन्तन के साथ प्रस्तुत कर राष्ट्रबोध की परिचारिका बनती है ये रचनाएं ।

अभिनवशुकसारिका –

अभिनवशुकसारिका में लोकचर्चा करते हुए डॉ. त्रिपाठी जी की छः कथाओं का संग्रह है। ये कथाएं माला में मोती के समान गूंथी हुई है। प्रत्येक कथा समाज की विभिन्न विसङ्गतियों पर प्रकाश डालती है।

त्रिपाठी जी एक संस्कारित व उच्च चारित्रिक मूल्यों के समाज को देखना चाहते हैं । उनकी प्रत्येक रचना चारित्रिक मूल्यों का प्रतिफलन है। डॉ० त्रिपाठी जी स्त्रीशिक्षा के समर्थक है। हमारा सम्पूर्ण जीवन सिखने के लिए है। हम नित्य नया सीखते है अतः शिक्षा की कोई उम्र नहीं जब भी अवसर मिले अपने जीवन में आगे बढ़ने का कुछ सिखने का तो लज्जा कैसी शिक्षा के प्रति अंग्रसर हो जाइए। जनता लहरी में कवि जनता की ही स्तुति कर रहे हैं क्योंकि

भारतीय जनता सर्वोपरि है अपने अधिकारों के प्रति सचेत जनता के हाथों में ही लोकतन्त्र रक्षित है। अतः जनता जनहित में समर्पित हो। विवेकशील समाज में सामूहिक चेतना आवश्यक है वही अन्याय के खिलाफ आवाज उठा सकती है। मनुष्य को संस्कारित होने के लिए स्वार्थपरायणा का परित्याग कर निस्वार्थ सेवाभाव को अपनाना चाहिए। अपने पद्य के माध्यम से जनता को सचेत करते हुए कवि लिखते है-

"नो दानैर्न तपोभिरप्यतितरां नो चेज्यया विद्यया,
नो काषायपटैरखण्डविभवैः स्यात् संस्कृतो मानवः ।
हित्वा स्वार्थपराणैकधिषणां धृत्वा च सेवाव्रतं
लोकाराधननिष्ठयैव पुरुषः संस्कार्यते धार्यते ॥[14]

आधुनिक संस्कृतसाहित्य अपनी दिव्यज्ञानमयी ज्योति से सम्पूर्ण मानवता का कल्याण करने में तल्लीन है। आधुनिकता या समृद्ध भारत का तात्पर्य समृद्ध भावबोध की रचना है। कवि द्वारा रचित 'रोटिका लहरी' जीवन का सम्पूर्ण संघर्ष इसी रोटी के लिए है। उपनिषदों में, 'अन्नं वै ब्रह्म' अर्थात् अन्न को ही ब्रह्म कहा गया है क्योंकि अन्न के बिना जीवन सम्भव नहीं। कवि राधावल्लभत्रिपाठी जी रोटिकालहरी में लिखते है।

"केनचित् प्राभृतैः प्राप्यते रोटिका
केन वोत्कोचमादाय सा प्राप्यते ।
अग्रहस्तं पुरः सारयित्वा मुहु
र्दीनदीनैः स्वरैः केनचिद् भिक्ष्यते ।।[15]

अर्थात - किसी के द्वारा रोटी उपहार में पाई जाती है कोई रिश्वत से और किसी गरीब द्वारा हाथ फैलाकर दीनस्वर में भीख मांगकर रोटी प्राप्त की जाती है। प्रतीत होता है कि समस्त संसार के संघर्षों की धुरि जैसे रोटी में समाई है।

आधुनिक साहित्यकार मानवतावादी दृष्टिकोण को लेकर चलता है। आज विज्ञान उन्नति पर है परन्तु विज्ञान की संहारात्मक उपलब्धियों के परिणामस्वरूप युद्ध की विभीषिकाओं से सम्पूर्ण मानवता सन्त्रस्त है। मानवजाति के अस्तित्व को बचाने के लिए कवि श्रीनिवासरथ अपनी कविता के माध्यम से आह्वान करते हैं –

"मा कुरु। भीति विकम्पित मनसा
मलिनं वहन, सजलं नयनम् ।
भुवि दानवता यथा प्रकाशम
कलयति मानवता कुल नाशम् ॥"[16]

अतः साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज को सचेत करता है कि विध्वंसकारी प्रवृति का परित्याग कर सृजनात्मक प्रवृत्ति का निर्वाह करें । सद्धर्म की रक्षा के लिए सत्कर्म करने चाहिए विनाशकारी युद्ध में सम्पूर्ण समाज को आहूत होने से बचाना चाहिए। कवि समाज में चेतना जागृत करते हुए कहते है-

"संघर्ष सततं समाजरचने सद्धर्म संरक्षणे ।
सत्कृत्य ननु जीवनस्य न पुनर्युद्धे विनाशाहुतिः ।।[17]

साहित्यकारों ने देशभक्ति के भाव को तथास्वदेशप्रेम का दीपक भारतीयों के हृदय में जलाया है। स्वराष्ट्राभिमान का आलोक भरा है। भारतराष्ट्र की अखण्डता का आह्वान करते हुए कवि नीर्पाजेभीमभट्ट लिखते हैं-

"सामरस्य समानत्त्वं सर्वधर्मसमन्वयः ।
सत्यं ज्ञानमहिंसा च सर्वसौख्योपपादकम् ।।"[18]

आज का जागरुक व प्रबुद्ध साहित्यकार हर विषय पर खुलकर लिखता है। ये विषय भारतीय समाज की समस्याओं से जुड़े हुए हैं। कन्याओं का तिरस्कार, पुत्रप्राप्ति की लालसा, निरन्तर गिरते जीवन मूल्य पर संस्कृत कवियों ने गहरी चिन्ता व्यक्त की है।

समाज आज संस्कारित नहीं हुआ है बल्कि विभ्रमित हो गया है पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करने में। जहाँ कभी संयुक्त परिवार व परिवार के सदस्यों में सहयोग, सद्भाव दिखाई देता था वहीं आज एकल परिवार अपने – अपने स्वार्थ में दिखाई देते हैं। ग्रामीण आंचल में तो आज भी सहयोग सद्भाव देखने को मिल जाता है पर शहरी क्षेत्रों में एक परिवार अपने पड़ोसी परिवार से कोई सम्बन्ध नहीं रखता।

वीणापाणिपाटनी-

वीणापाणिपाटनी द्वारा विरचित 'अपराजिता' नारी की अजेय गौरवगाथा का कथासंग्रह है। नारी जीवन की विभिन्न समस्याओं का चित्रण प्राप्त होता है कहीं दहेज से प्रताडित नारी, कहीं पुत्री के प्रति पिता का उपेक्षाभाव, कहीं ससुराल का दुर्व्यवहार इत्यादि विभिन्न समस्याओं को इङ्गित करती हुई लेखिका समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर नारी के स्वाभिमान की रक्षा भी करती है।

अपराजिता नारीजाति के लिए नवीन सोच का प्रवेशद्वार है। सकारात्मक सोच को विकसित करने का कथासंग्रह है। स्त्री संघर्ष में भी अपराजित है वह संघर्षशील है और दृढ़संकल्प के साथ अपने जीवन के पड़ावों को पार करती है। एक सशक्तनारी विपरीत परिस्थितियों में भी उनका सामना कर अपने स्वप्नों का संसार बसाती है लेखिका को नारी का यही रुप प्रतिष्ठित है जिसमें विवशता के आंसू नहीं बल्कि जिजीविषा की आग हो, परिस्थितियों के सामने दम तोड़ने की असहजता नहीं अपितु संघर्ष करने की ऊर्जा हो । इस प्रकार ये कथा - साहित्य हमारे राष्ट्र की संघर्षशील एवं सत्यमार्ग पर चलने वाली नारियों का बोध करवाता है।

मानवीयमूल्य-

साहित्य समाज के लिए है अतः जीवन की समस्याओं में से वास्तविकता को ग्रहण करके उसके मूल्य का बोध कराना ही आज के साहित्यकार का उद्देश्य है। मूल्य कोई मूर्तवस्तु नहीं वह एक

अवधारणा है जो सुख व आनन्द की परिचायक है जीवन के अस्तित्व की व्याख्या हैं।

जीवन में जीवनमूल्यों की परमावश्यकता है। महानपुरुषों के जीवन का अध्ययन करने से पता चलता है कि उनमें कुछ असमान्य गुण होते हैं। इन गुणों को भगवद्गीता में "दैवी सम्पतिः" नाम से निर्दिष्ट किया गया है। आज के समय में हम जिन्हें जीवनमूल्यों के रूप में जानते है। आज के समय में प्राचीन व शाश्वत मूल्यों का उपयोग नहीं है। अदूरदृष्टि, सङ्कुचितवृत्ति, स्वार्थलिप्सा, अन्धानुकरण जैसे विकारों से समाज की विचारशक्ति नष्टप्राय हो गई है। मन, बुद्धि व आत्मा का श्रेष्ठत्वम् ही जीवन की श्रेष्ठता का परिचायक हैं।

स्वामीविवेकानन्द का जीवन व विचार आज की युवाशक्ति के लिए प्रेरणादायी है आधुनिक भारत व विश्व उनकी मूल्यस्थापना का ऋणी है। आत्मनिर्भरता व कर्त्तव्यपरायणता ही श्रेष्ठतम धर्ममूल्य हैं। हमारे नैतिक मूल्य चरित्र की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हैं। आचरण की शुद्धता ही नैतिकता है। संस्कृत भाषा के पठन- पाठन से अनायास ही मानवीयमूल्यों की स्थापना मनुष्य के अन्दर हो जाती है। हमें हमेशा मधुर वचन बोलना चाहिए जो दूसरों को बुरा लगे ऐसे कड़वे वचन प्रयोग नहीं करने चाहिए। कहा भी गया है-

"प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।
तस्मात् तदैव वक्तव्यम् वचने का दरिद्रता ।।"[19]

अर्थात - प्रिय वचन बोलने से सभी प्राणी सन्तुष्ट हो जाते है तो फिर वचनों में कैसी दरिद्रता हमेशा मधुर ही बोलना चाहिए।

निष्कर्ष-

अतः निष्कर्षतः हम ये कह सकते है कि उभरते भारत का साहित्यराष्ट्रबोध की भावना से परिपूर्ण है। साहित्यकार अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के विभिन्न पक्षों को उजागर करता है। वर्तमानपीढ़ी में नवचेतना की जागृति करता है। समस्याओं के साथ समाधान प्रस्तुत करता है तो कहीं नैतिकमूल्यों व संस्कारों की पालना की कामना करता है जो उभरते भारत को सुदृढ़ बनाने की आधारशिला है।

मन में संवेदनात्मकतत्व होते है जिससे साहित्य की रचना होती है हमारे साहित्य पर विवेकानन्द जैसे विचारकों का तथा अरविन्द जैसे दार्शनिकों का व्यापक प्रभाव पड़ा है। मानववाद ने मानव के मूल्यों को साहित्य में स्थापित किया है। कोई भी साहित्य समाज से हटकर प्रासंगिक नहीं हो सकता। साहित्य का स्वरूप बदलते हुए भी मनुष्य की संवेदना का आधार नहीं खोता। यही संवेदना यथार्थबोध से जुड़ती है। राष्ट्रबोध से जुड़ती है और मनुष्य को नये मूल्यो का सन्दर्भ देती है। लोकमंगल की कामना को समेटे हमारा साहित्य राष्ट्रबोध से अवगत करवाता है।

सन्दर्भग्रन्थ-

1. अर्वाचीन संस्कृतसाहित्य (दशा एवं दिशा) सम्पादक-डॉ. मंजुलताशर्मा, परिमलपब्लिकेशन्स, दिल्ली।
2. जीवनमूल्यानि (डॉ. मङ्गला मिरासदार)
3. साहित्य की वैचारिक भूमिका (डॉ.राजेन्द्रमिश्र), तक्षशिला प्रकाशन 98-ए, हिन्दीपार्क दरियागंज, नई दिल्ली
4. संस्कृत साहित्येतिहास, डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत, प्रकाशक- भारतीय संस्कृतभवन।
5. आधुनिक संस्कृत साहित्य के नये भावबोध, लेखिका - (डॉ० मञ्जुलता शर्मा, प्रकाशन- संस्कृत ग्रन्थागार, १०९, अग्रवालप्लाजा सेक्टर-14, रोहिणी, दिल्ली ।
6. संस्कृत साहित्य चिन्तन, लेखक - डॉ० बाबूलाल मीना, प्रकाशन - ईस्टर्न बुक लिंकर्स 5825, न्यू चन्द्रावल, जवाहरनगर, दिल्ली । फोन - 23850287, 9811232913 प्रथम संस्करण- 2020
7. लहरीदशकम्, लेखक - प्रो० राधावल्लभत्रिपाठी प्रकाशन – प्रतिभाप्रकाशन (प्राच्य-विद्या-प्रकाशक एवं पुस्तक-विक्रेता) 29/5, शक्तिनगर, दिल्ली।

सन्दर्भ

1. मनु. ६/९२
2. ऋग्वेदः 10/191/4
3. संस्कृत साहित्येतिहासः, पृ.सं. 10
4. महाभारत
5. मनुस्मृतिः 2/20
6. भावमाला श्लो. 15
7. भाति में भारतम्. 3
8. भाति में भारतम् श्लो. 22
9. हविर्धानी, पृ.सं. 116
10. मत्तवारणी, पृ.सं. 37
11. औदुम्बरी, पृ.सं. 82
12. मतवारणी, पृ.सं. 102
13. अष्टम सर्ग, धीवरगति - २८
14. जनतालहरी श्लो० - ५
15. रोटिकालहरी श्लो० - ३३
16. शान्तिवचनम् शीर्षक कविता
17. डॉ० बलभद्रप्रसाद गोस्वामी (दूताञ्जनेयम् ११/२५)
18. समृद्ध भारतं भूयात्) पृ० सं० - १८
19. चाणक्यनीति. १६/१७